वेदो में गृहस्थों के लिए निर्देश

अथर्ववेद

१) आस्मन्गृहे गार्हपत्याय जागृहि । एना द्यत्या तन्वं संस्पृश्व ।

ऋषि:– सावित्री । देवता– स्वविवाह: । छन्द:–जगती । अथर्व १४–१–२१

हे सावित्रि । सविता काल = ब्राह्ममुहुर्त में जागनेवाली सावित्री सम सत्ती स्त्री ! (अस्मिन् गृहे गार्ह पत्याय जागृहि) सुसराल में आकर अपने पति के गार्हपत्य कार्यों के सम्बन्ध में सदा जागरुक रहना । और (एना पत्या तन्वं सं स्पृशस्व) अपने इस पति के साथ ही अपने शरीर का संस्पर्श – संभोग करना इस निर्देश का पालन होतो एड्स का नाम ही न सुनाई दे ।

निष्कर्ष –

पत्नी को पति के अतिरिक्त किसीसे भी संभोग करना वर्जित है ।

इसी प्रकार पति को अपनी पत्नी के अतिरिक्त किसी स्त्री से सम्बन्ध करना वर्जित है ।

सद्गृहस्थ के लिए किसी भी प्राप्ति के निमित्त गृहत्याग आवश्यक नही: ।

२) इहैव स्तं मा विमौष्टं विश्वमायुर्व्यश्नुतम् । क्रीडन्तौ पुत्रैर्नप्तृभिर्मोदमानौ स्वस्तकौ ।।

ऋषि:– सावित्रीसूर्या । देवता–दम्पती । छन्द:–अनुष्टुप् । अथर्व १४–१–२२

(नव दम्पती (इह एवद स्तम्) सदा इस घर में ही रहना (मा वियौष्टम्) मतभेद या मनमुटाव के कारण कभी सम्बन्ध विच्छेद मत करना । (पुत्रै:नप्तृमि: मोदमानौ) पुत्रों, पौत्रों आरे दोहतों के साथ आनन्द मनाते हुए और (क्रीडन्तौ) खेलते हुए तथा (स्व स्तकौ) घर के जीवन को उत्तम बनाते हुए (विश्वं आयु: व्य श्नुतम्) अपनी पूर्ण आयुका भोग करो ।

निष्कर्ष –

(१) वेद की दृष्टि में, विवाह देखभाल कर, परस्पर गुण व स्वभाव को परखकर करना चाहिए । और फिर पूर्ण आयु तक इसे निभाना चाहिये । सम्बन्ध–विच्छेद या तलाक वेद की दृष्टि में अनवाञ्छनीय ही नहीं, तिरस्करनीय भी है ।

(२) वेद की दृष्टि में वानप्रस्थ या सन्यास सबके लिए अनिवार्य नहीं । पति–पत्नी संपूर्ण आयु गहस्थ भी बने रह सकते हैं ।

रजस्वला पत्नी के साथ संभोग से शरीर श्री विहीन हो जाता है ।

(३) अश्लीला तनूर्भवति रुशती पापयामुया । पतिर्यद् वघ्वो वासस स्वमङ्गमभ्यूर्णुते ।।

अथर्व ४–१–२१

(यत्) यदि (पति:वघ्व: अमुया पापया वासस: स्वम् अंगम् अभ्यूर्जुते) पति व्रतभंग रुपी पाप से विध्द ऋतुमती पत्नी के साथ सहवास के द्वारा अपने अंग को आच्छादित दूषित करता है, तो उसकी (रुशती तनू) चमचमाती देह (अश्लीलाभवति) श्री विहीन हो जाती है ।

निष्कर्ष :

ऋतुमती–रजा स्वला स्त्री के साथ संभोग, आयुर्वेद के दृष्टिकोण से दु:खदायी हो सकता है । चेहरा श्रीविहीन और मन विकल तो हो ही जाता है ।

पति–पत्नी को चक्रवाक दम्पती की तरह जीवन व्यतीत करना चाहिये ।

(४) इहेमविन्दु संनुद चक्रवाकेव दम्पती । प्रजयैनौ स्वस्त्तकौ विश्वमायुर्व्यश्नुत्ताम ।।

ऋषि:–सावित्री सूर्या । देवता–आत्मा । छन्द:–अनुष्टुप् । अथर्व १४–२–६४

हे (इन्द्र) सम्राट की ओर से नियत, राजकीय व्यवस्था के अध्यक्ष ! (इमौ) इनदोनो विवाहोपरान्त पतिपत्नी बने (दम्पती) दम्पती को (इह) इस गृहस्थाश्रममें प्रवेश करने के बाद (चक्र वाकौ इव) चकवा चकवी के जोड़े की जरह रहने की (संनुद) प्रेरणा दे । ताकि (एतौ) ये दानों (प्रजया) उत्तम सन्तान वाले (स्वस्त्तकौ) उत्तम घरवाले (विश्वं आयु: व्यश्नुताम्) अपनी संपूर्ण आयु को सुखसपूर्वक व्याप्त करें – भोगें ।

निष्कर्ष :-

राज्य की विवाह सम्बन्धी व्यवस्थाके अध्यक्ष न्याधीश को विवाह को पत्र्जी करण करते समय चकवा चकवी के जोड़े का उदाहरण देना चाहिये – चकवाचकवी के लिए प्रसिध्द है – कि वे जीवन पर्यन्त दोनों नर व मादा किसी दूसरी मादा या दूसरे नर से सम्बन्ध नहीं करते । उनका जीवन कभी व्यभिचरित नहीं होता, इसी प्रकार तुम्हे भी किसी दूसरी मादा या दूसरे नर से कभी सम्बन्ध नहीं करना चाहिये ।

(५) साथ ही यजुर्वेद अध्याय १८ के मन्त्र ८ में आए 'मे' के स्थान 'ते' करके छपा हुआ अशीर्वाद राष्ट्रभाषा और दम्पती की मातृभाषा में अवश्य देना चाहिए ।

शं च ते मयश्च ते प्रियं च ते ऽनुकामश्च ते, कामश्च ते सौमनसश्च ते भागश्च ते द्रविणं च ते,
भद्रं च ते श्रेयश्च ते वसीयश्च मे यशश्च ते, यज्ञेन कल्पान्ताम् ।। यजु: १८–८

ऋषि:–देवा: । देवता– आत्मा । छन्द:– भुरिक्शक्करी ।

नव दम्पती! तुम्हे (शं चमयश्च) शारीरिक और मानसिक सुख प्राप्त हो (प्रियंच अनुकामश्च) तुम्हें प्रीतिकर वस्तुएं मिलें और धर्मानुकूल कामनाए पूर्ण हों । तेरी (कामश्च सौमनसश्च) शारिरिक कामनाएं पूर्ण हों और मन प्रसन्न रहे । (भगश्च ते द्रविणंच) तुझे सदा सौभाग्य तथा आवश्यकतानुसार धन प्राप्त हो । (भद्रंच मे श्रेयश्च ते) तेरा पार्थिव व आध्यात्मिक दोनों प्रकार कल्याण हो । (वसीयश्च ते यशश्चते) तुझं निवासयोग्य घर तथा शुभकर्मों से प्राप्त होने वाला यश मिले । तेरी ये सब प्राप्तियां (यशेन कल्पन्ताम्) यश भावना से ओतप्रोत होने के कारण, तुझे अधिकाधिक समर्थ बनाएं ।

मनोहर विद्यालंकार